जनसत्ता 10 मार्च, 2013: मार्क्सवादी रुझान का बौद्धिक वर्ग दामोदर धर्मानंद कोसंबी को प्राचीन भारत का महान इतिहासकार, बल्कि पहले प्रामाणिक इतिहासकार के रूप में प्रचारित करता रहा है। कोसंबी के अलावा भारत के किसी अन्य इतिहासकार का इतनी योजनाबद्ध रीति से प्रचार और गौरवीकरण कभी नहीं हुआ।

कोसंबी क्या सचमुच प्राचीन भारत के इतिहास के इतने महत्त्वपूर्ण व्याख्याता हैं? उन्होंने भारतीय इतिहास को समझने का जो ढांचा अपनाया, क्या उसके भीतर इस इतिहास को समझा जा सकता है? कोसंबी किसके लिए इतिहास लिख रहे थे? उनकी स्थापनाओं की प्रामाणिकता क्या है? इतिहासकारों ने कोसंबी के बहुआयामी व्यक्तित्व और ख्याति से दब कर ऐसे प्रश्न उठाने का साहस भी कभी नहीं किया।

प्राचीन इतिहास के विशेषज्ञ, हड़प्पाकाल और वैदिक सभ्यता पर हिंदी में मौलिक पुस्तकों के रचयिता भगवान सिंह खुद मार्क्सवादी रहे हैं। वे कोसंबी के इतिहास लेखन का अध्ययन भी करते थे और उनसे प्रभावित भी हुए थे। लेकिन इतिहास लेखन के मानदंडों के प्रति अपनी प्रतिबद्धता के कारण वे अन्य मार्क्सवादी इतिहासकारों की तरह प्रमाणों को अनदेखा नहीं कर सकते थे, चाहे इन प्रमाणों के कारण मार्क्सवादी इतिहासकारों की स्थापनाएं ध्वस्त भी हो जाती हों। भगवान सिंह की नई पुस्तक कोसंबी: कल्पना से यथार्थ तक उनके विस्तृत अध्ययन, निर्भीक चिंतन का परिणाम है।

कोसंबी अपनी शिक्षा और कार्य से इतिहासकार नहीं थे। वे अपनी वृत्ति से गणितज्ञ थे। हार्वर्ड विश्वविद्यालय से गणित में बीए की डिग्री लेकर भारत लौटे थे। उनकी पुत्री कहती हैं कि बाबा कोसंबी पर अमेरिकी शिक्षा का यह प्रभाव पड़ा था कि वे अपने आचार-व्यवहार और कार्य व्यापार में आजीवन अमेरिकी बने रहे।

भगवान सिंह चालीस वर्षों से भारत की भाषाओं-बोलियों, स्थान नामों, वैदिक भाषा, वेदकालीन इतिहास और हड़प्पा सभ्यता के गंभीर अध्येता रहे हैं। प्राचीन इतिहास को समझने के लिए गहरी प्रतिबद्धता और चिंतन-मनन के जरिए मौलिक स्थापनाएं करते हुए उन्होंने पश्चिमी विद्वानों की कल्पनाओं का खंडन किया है। (विश्वविद्यालयी और मार्क्सवादी इतिहासकार प्राच्यों की ही स्थापनाएं मानते और पढ़ाते हैं।) उन्होंने हड़प्पा और वैदिक सभ्यता की अतिप्राचीनता और समकालिकता के पुष्ट प्रमाण दिए हैं। पश्चिमी और उत्तर भारत में पिछले दशकों में हुई पुरातात्त्विक खुदाइयों से उनके निष्कर्षों की पुष्टि हुई है।

पश्चिमी विद्वानों ने उन्नीसवीं शती के मध्य में भाषा परिवारों, भारोपीय भाषा परिवार, भारतीय आर्य भाषा बोलने वाली आर्य नस्ल की कल्पना की। भगवान सिंह पाते हैं कि कोसंबी भी पूरी तरह नस्लवादी थे। उन्हें नस्लवादी न मान लिया जाए, इसलिए वे कभी-कभी यह भी कह देते थे कि ''नस्ल की अवधारणा किसी भी चरण में दुरुस्त नहीं'' लेकिन वे दारा प्रथम के समाधि लेख में उसे अपने को आर्य, आर्यवंशी (अरयि, अरयिचरि) बताता हुआ पाते हैं। उनसे बहुत पहले मैक्समूलर तक ने न केवल आर्य नस्ल की अवधारणा को हास्यास्पद कहा था और उन्होंने इरानियों के भारत से गए होने के प्रमाण दिए थे।

कोसंबी ब्राह्मणों में भी दो नस्लें मानते थे: 'गौरांग, नीलाक्ष, जन और कृष्णत्वक्, श्यामाक्ष जन। उन्होंने आर्यों की नाक के सूचकांक ('इंडो-आर्यन नोज इंडेक्स') पर एक लेख लिखा। नेस्फील्ड इससे सत्तर वर्ष पहले यह अध्ययन करके इस प्रतिकूल निष्कर्ष पर पहुंचे थे कि 'भारतीय आबादी में तात्त्विक एकता है' और 'इसे आर्यों और आदिवासियों में नहीं बांटा जा सकता।'

कोसंबी हमेशा भारत-बाह्य स्रोतों को विश्वसनीय, पश्चिमी इतिहासकारों की स्थापनाओं को प्रामाणिक और भारतीय इतिहासकारों की स्थापनाओं को भ्रांतिपूर्ण मानते रहे। उनकी शिकायत थी कि बाइबिल में लेवांवासियों ने अपना सुनिश्चित इतिहास लिखा है, लेकिन वेदों, ब्राह्मण ग्रंथों, पुराणों आदि में केवल गोल कल्पनाएं हैं। दरअसल, कोसंबी में इन ग्रंथों को समझने, इनसे ऐतिहासिक तथ्य प्राप्त करने की न तो योग्यता थी और न ही इसका धैर्य था।

वे मुअनजोदड़ो-हड़प्पा की विशेषताओं को भी नहीं समझे और पश्चिमी पुरातत्त्ववादों की खंडित हो चुकी भ्रांत धारणाओं को ही दोहराते रहे। आज पूरी सरस्वती घाटी में और अंतर्वेद में भी हुई खुदाइयों से सिंधु घाटी से भी अधिक प्राचीन नागर सभ्यताओं के प्रमाण मिले हैं।

भगवान सिंह ने लिखा है- ''कोसंबी अपने तर्कबल से उपनिषद काल को बौद्धकाल के बाद का सिद्ध कर देते हैं। ... अहिंसा के सिद्धांत को ब्राह्मणवादी यज्ञ के विरोध में उत्पन्न सिद्ध कर देते हैं। ... वह हड़प्पा सभ्यता को भी नहीं समझ सके, जिसके पुरातत्त्व से वह परिचित थे, और पुरातत्त्व को ही वह इतिहास के विवेचन के लिए सबसे विश्वसनीय, कहें निर्णायक तत्त्व मानते थे, तो उनके विश्वासबोध पर भरोसा कम होता है।''

कोसंबी इंद्र को कांस्य युग के लुटेरे सरदार का नमूना मानते हैं जो अदेवों की संचित निधि को अनवरत लूटने में लगा रहता है। 'पणि ऐसे वणिक थे जो वैदिक धर्म और कर्मकांड में विश्वास नहीं करते थे।' 'होली पाषाणकालीन कामोद्दीपन का त्योहार है।' 'ब्राह्मणों और उपनिषदों में उन्होंने केवल गोत्र और टोटेम निकाले।' इस तरह की गोल कल्पनाएं कोसंबी के इतिहास में भरी पड़ी हैं।

इतिहास लेखन में पहले ही यह कहा जाता है कि इतिहास-चेतना न होने के कारण हिंदुओं ने इतिहास ग्रंथ नहीं लिखे, अत: भारतीय इतिहास के लिए स्रोतों का अभाव है। भगवान सिंह प्राचीन इतिहास के स्रोतों का विस्तार करते हुए वेदों की शब्द संपदा का विस्तृत अध्ययन करते हैं और तत्कालीन सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक और राजनीतिक इतिहास की सामग्री प्राप्त करते हैं। भाषाओं-बोलियों, व्यक्तिनामों, जातिनामों और स्थान नामों का अध्ययन करके उन्हें भी इतिहास के स्रोत के रूप में परिगणित करते हैं। वे हड़प्पा को वैदिक सभ्यता का केंद्र सिद्ध करते हैं।

भगवान सिंह के शब्दों में ''कोसंबी की सबसे बड़ी समस्या पश्चिम की लादी को पूर्व की पीठ पर लादने की है, जिसके प्रतिनिधि स्वयं बन कर वह उसे अपनी पीठ पर ले लेते हैं। दूसरी समस्या उसे निष्ठापूर्वक गन्तव्य तक पहुंचाने की है। लादी अपने असंतुलन से ही सरकने लगती है। ... वह उस सरकती

लादी को संभालने के लिए अपनी रीढ़ टेढ़ी कर लेते हैं और अकादमिक विकलांगता के शिकार हो जाते हैं। ... उनका कालबोध इसलिए अकालबोध में बदल जाता है कि वह अपने को ही कालदेव मान बैठते हैं।''

मार्क्सवादी इतिहासकारों ने कोसंबी की 'समन्वित पद्धति' को भारतीय इतिहास के अध्ययन के लिए बड़ा अवदान माना है। इस पद्धति से क्या परिणाम निकले हैं? भगवान सिंह ने कोसंबी के कार्य की तुलना वासुदेव शरण अग्रवाल के कार्य से की है। वासुदेव शरण अग्रवाल ने चित्रों-खिलौनों, अल्पनाओं, स्थानीय रीतियों, लोकप्रचलित मेलों, प्रथाओं आदि का अध्ययन करके भारत के इतिहास को समझा। उन्होंने पाणिनि के अष्टाध्यायी जैसे व्याकरण ग्रंथ का अध्ययन किया, हर्षचरित, कादंबरी, पद्मावत, और महाभारत के सांस्कृतिक अध्ययन किए, वेद सूक्तों के भाष्य किए और दिखाया कि कोसंबी वासुदेव शरण अग्रवाल के समक्ष ज्ञान और विद्वता में बौने सिद्ध होते हैं।

सत्रहवीं शताब्दी से ही पश्चिम से आने वाले ईसाई धर्म प्रचारकों और व्यापारियों को ऐसा लगता था कि हिंदू समाज-गठन ब्राह्मणों की कृति है। कोसंबी भी बार-बार ब्राह्मण वर्ण के प्रति उग्र क्षोभ और आक्रोश व्यक्त करते हुए कहते हैं कि 'ब्राह्मणवाद वर्णवाद का प्रतीक है, अत: सामाजिक न्याय का विरोधी है। हिंदुत्व का प्रतीक है, इसलिए इस्लाम, ईसाइयत और धर्मनिरपेक्षता का विरोधी है। रूढ़िवादिता का प्रतीक है, इसलिए प्रगति और क्रांति का विरोधी है। राजनीति में इसका लाभ दक्षिणपंथियों को मिलता है, इसलिए यह दूसरे सभी राजनीतिक संगठनों का शत्रु है।' कोसंबी (और उनके अनुयायी इतिहासकार) ब्राह्मणों पर ऐसे आरोप लगाते हैं जो नात्सियों द्वारा यहूदियों पर लगाए गए आरोपों से समांतर हैं। इसके बाद 'फाइनल साल्युशन' ही बच जाता है, जिसके लिए राज्य पर मार्क्सवादियों का कब्जा आवश्यक है।

भगवान सिंह ने भारतीय मार्क्सवादियों के इस 'एंटीसेमिटिज्म' की कलई खोलते हुए ब्राह्मणों के दो अविस्मरणीय अवदानों का उल्लेख किया है। ''पहला यह कि बौद्धिक श्रेष्ठता ही सामाजिक श्रेष्ठता का निर्धारण करती है। श्रेष्ठता के दूसरे सभी आधार इसके सामने हेय हैं। ... ब्राह्मणवाद का दूसरा अवदान एक निर्भीक और आत्मविश्वासी बुद्धिजीवी वर्ग का निर्माण था। ... इसके लिए कुछ रियायतों का विधान था, जो हमें पक्षपातपूर्ण लगता है, चौंकाता भी है, पर इसका प्रावधान कुछ वैसा ही है जैसा दूतों और शिष्टमंडलों को दिया जाता रहा है और जिसकी मांग बुद्धिजीवी समाज भी करता है।''

कोसंबी इतिहास लेखन में भाषिक विश्लेषण का उपयोग नहीं कर सकते थे, इसलिए उन्होंने इतिहास लेखन में इसकी भूमिका को ही इतना संदिग्ध बना दिया कि मार्क्सवादी इतिहासकारों ने इसका उपयोग करना ही छोड़ दिया। भारत में इतना भाषिक वैविध्य रहा है कि उसने संपूर्ण जनसंख्या को समरस बना दिया है। इस वैविध्य को पश्चिमी भाषा वैज्ञानिकों द्वारा प्रायोजित भाषा परिवारों में नहीं समेटा जा सकता। भारत में हुए गुणसूत्रीय अध्ययनों से यह बात प्रमाणित हो गई है कि आर्य-द्राविड, गौर-कृष्ण, उत्तर-दक्षिण, पहाड़ी-मैदानी जैसे भेद निरर्थक हैं, क्योंकि भारतीय जनसंख्या में ये सब मिलेजुले हैं।

भगवान सिंह के अनुसार जातिव्यवस्था और वर्णव्यवस्था के विश्लेषण के लिए बहुत सावधानी की आवश्यकता है। 'नृतत्त्वविद, समाजशास्त्री, भाषाविज्ञानी और इतिहासकार सभी इस (व्यवस्था) के सम्मुख अवाक खड़े रह जाते हैं। अपनी समझ से जो कुछ कहते हैं उसमें इतना सतहीपन होता है कि दूसरे पहलू ही नहीं, वह पहलू भी उजागर नहीं हो पाता, जिसको वे प्रमुखता देते हैं। ... कोसंबी वर्णव्यवस्था और जातिव्यवस्था का अतिसरलीकृत समाधान प्रस्तुत करते हैं। वे आश्रमव्यवस्था को भी वर्णव्यवस्था से जोड़ देते हैं। ... (कोसंबी ने) वर्णव्यवस्था और आश्रमव्यवस्था का जितना भोंडा विवेचन किया है वैसा किसी ईसाई पादरी से भी संभव नहीं हो पाया था। उनके विवेचन में 'तर्क और औचित्य का निर्वाह नहीं हो पाता और इतनी विपुल सूचना के बाद भी उनके कथन अंतर्विरोधों से भरे हुए हैं।'

भगवान सिंह कोसंबी की जाति-वर्ण संबंधी स्थापनाओं की आलोचना करते हुए यह भी मानते हैं कि प्राचीनकाल से ही शूद्रों का सतत शोषण होता रहा है। जातियों की निर्मिति, उनके परस्पर संबंध, उनकी भिन्नताएं और उनकी विशेषताएं- भारतीय समाज की संरचना में ये विविध तत्त्व कैसे समन्वित और समरस हुए, यह समझने के लिए स्मृतिकारों और धर्मशास्त्रकारों में की गई व्यवस्थाएं यथेष्ट प्रमाण नहीं हैं। संभव है कि भारतीय सर्जनात्मकता और ऊर्जा जाति-व्यवस्था के कारण अवरुद्ध रही हो और आज भी हो। लेकिन बहुतेरी जातियां अभी अठारहवीं शताब्दी तक अपने परंपरागत व्यवसायों का पालन ही नहीं कर रही थीं, उन व्यवसायों में सृजनात्मकता और चमत्कार भी दिखला रही थीं।

अंग्रेजों ने भारत में अठारहवीं शताब्दी में प्रचलित प्रविधियों का विस्तृत अध्ययन कराया था। तब तक भारत में खनिज उत्खनन, लौह और अयस्कों से संबंधित प्रविधियां विश्व में श्रेष्ठतम थीं। ऐसी असंख्य प्रविधियां प्राचीनकाल से चली आ रही थीं और विशिष्ट जातियों की संपत्ति थीं। शूद्र समझी जाने वाली जातियों में भी बहुत से प्राविधिक ज्ञान विकसित हुआ करते थे। भगवान सिंह को स्वयं जातिनामों से भी इनका पता चल सकता है। खगोल, ज्योतिष, रसायन और चिकित्सा के क्षेत्र में भी लगातार विकास होता रहा। इन सभी क्षेत्रों में जैसे सिद्ध चिकित्सा प्रणाली में शूद्रों का कम योगदान नहीं था।

बारहवीं-तेरहवीं शताब्दी में इस्लामी सेनाओं द्वारा समृद्ध नगरों, तीर्थों और शिक्षा केंद्रों का बड़े पैमाने पर विध्वंस हुआ। कई सौ जगहों पर मंदिर और मूर्तियां टूटीं ही, वहां के विशाल पुस्तकालय भी जला दिए गए। अकेले नालंदा के दो बड़े भवनों में छह लाख पुस्तकें सुरक्षित थीं, जो बख्तियार खिलजी की सेनाओं द्वारा अग्नि को समर्पित कर दी गईं। जिन्होंने उसे बचाने की चेष्टा की उन्हें भी आग में झोंक दिया गया। बिहार और बंगाल में उस समय पंद्रह से अधिक शिक्षा केंद्रों का, महाविहारों-विश्वविद्यालयों का विवरण मिलता है। ये सब दो-तीन वर्षों के भीतर ही ध्वस्त कर दिए गए, वहां के अध्यापकों की हत्या कर दी गई। इतने बड़े पैमाने पर हुए विध्वंस और संहार का शिक्षा और सृजनात्मकता पर क्या प्रभाव पड़ा या पांच सौ वर्षों तक फारसी के राजभाषा रहने या पिछली तीन शताब्दियों से लेकर आज तक अंग्रेजी भाषा के प्रभुत्व का सृजनात्मकता पर क्या प्रभाव पड़ रहा है, ये सब कारण जातिव्यवस्था से कहां तक संबंधित हैं? भगवान सिंह मानेंगे कि शोधकर्ताओं द्वारा इन समस्याओं के विस्तृत अध्ययन की अभी तक शुरुआत भी नहीं हुई है।

भगवान सिंह लिखते हैं: ''साम्यवादी कम्यून भारतीय गांवों का ही कुछ अधिक सुथरा रूप है, जो अपनी अधिकतर आवश्यकताओं की पूर्ति स्वयं कर लेता

है... और कृषि-उत्पादों के अंतर्देशीय संचलन को संभव बनाता था□ मामूली कप□-लत्ते उसके आसपास के जुलाहे तैयार कर लेते थे, पर मूल्यवान रेशमी वस्त्रों और सीप, लाख, शीशे की चू□ियों से ले कर शंख, सस्ते रत्न, टिकुली, सिंदूर, काजल, पत्थर के सिल-बट्टे, पथरी या घीया पत्थर के बर्तन आदि बहुत-सी वस्तुओं का उपयोग करता था और कई तरह के आपूर्ति सूत्रों से जु□ा रहता था□ बैलों, बछ□ों, गायों, भैंसों के विशाल पशु मेले, जिनमें हाथी, घो□े तक बेचे-खरीदे जाते थे, साल में □क बार सुदूर स्थानों पर लगते और महीनों चलते□ ये संपर्क की □क धुरी का काम करते□ तीर्थाटन का साहस सभी को नहीं होता, पर अनेक को होता और वे सुदूर देशों की यात्रा□ं करके लौटते और रास्ते में प□ने वाले अंचलों की बोली-बानी, रीति व्यवहार और प्राकृतिक वैभव की कहानियां विश्वकोशीय तेवर से आजीवन सुनाते रहते□ इसलि□ बाहरी दुनिया से पूरी तरह कटे और आत्मकेंद्रित ग्राम इकाइयों से बने भारत की छवि उनके द्वारा ग□ी गई थी, जो भारत को न तो समझना चाहते थे, न ही समझने की योग्यता रखते थे□"

भगवान सिंह जब भारतीय गांव का यह वर्णन करते हैं तो उनको यह भी परिकल्पित करना चाहि□ कि इस वर्णन से भारतीय गांव में किस प्रकार की जाति-व्यवस्था की सूचना मिलती है?

उनके अनुसार कोसंबी भारतीय सभ्यता की प्रकृति को समझने के लि□ तैयार ही नहीं थे□ भारत को पश्चिम के अनुरूप देखना चाहते थे, वह भी उस पश्चिम के अनुरूप जो संस्कृति, ज्ञान और मनुष्यता से नहीं, ईसाइयत से जु□ा हुआ था□ वे भारत की उन उपलब्धियों का भी उपहास करते हैं (जैसे दिक और काल और द्रव्य के मान) जिन पर उन्हें गर्व होना चाहि□□ प्राचीन भारतीय उपलब्धियों के विषय में कोसंबी का दृष्टिकोण इतना नकारात्मक था कि वे स्वयं अपने आंक□ों और विश्लेषण से जिन निष्कर्षों तक पहुंचते हैं, उनको भी किसी न किसी बहाने पलट देते हैं□ उन्हें भारत के सांस्कृतिक अवमूल्यन में मूर्तिभंजन का आनंद आता है□ यह आनंद स्वयं उन्हें अपेक्षा से अधिक असंतुलित और अरक्षणीय बना देता है□"

कोसंबी के प्रशंसकों ने उनके बहुभाषा ज्ञान और संस्कृत ज्ञान का बार-बार उल्लेख किया है□ भाषाओं का सम्यक ज्ञान जीवनपर्यंत साधना से संभव होता है□ कोसंबी ने संस्कृत कभी प□ी-सीखी नहीं□ उनका स्वयं का कहना है कि भर्तृहरि के शतकत्रय का संपादन करने की प्रक्रिया में ही उन्होंने संस्कृत सीख ली और दुनिया के सामने ब□े संस्कृतज्ञ हो ग□□ उनका संस्कृत का ज्ञान बहुत त्रुटिपूर्ण था, इसके अनेक प्रमाण हैं□ संस्कृत न जानते हु□ भी उन्होंने शतकत्रय और सुभाषित रत्नागार के संपादन का बी□ा उठाने का साहस कर लिया और सम्मानित प्रकाशकों ने उन्हें यह कार्य सौंप दिया□ यह असाधारण घटना थी, जो केवल 'नेटवर्किंग' का परिणाम थी□

भगवान सिंह की पुस्तक में कोसंबी की त्रुटिपूर्ण स्थापनाओं की ढेरी लगी हुई है□ आज भी ये स्थापना□ं इतिहासकारों द्वारा मान्य हैं□ कोसंबी के कार्य की भगवान सिंह द्वारा की गई परीक्षा को खुले दिमाग से प□ा जाना चाहि□□ भगवान सिंह का कार्य प्राचीन भारत के इतिहास के अध्ययन के लि□ नया मार्ग खोलता और प्रशस्त करता है□ हमें विश्वास है कि बहुत से युवा इतिहासकार इस मार्ग पर आगे ब□ते हु□ इसको और विस्तीर्ण और दीर्घ बना□ंगे□

कमलेश

कोसंबी: कल्पना से यथार्थ तक; भगवान सिंह; आर्यन बुक्स इंटरनेशनल, पूजा अपार्टमेंट्स, 4 बी, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली; 795 रुप□□